मतभेद–मनोभेद

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़

पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

मतभेद और मनोभेद दोनों एक–दूसरे के विरुद्ध हैं। मनुष्य को मनोभेद नहीं रखना चाहिए। मुंडे–मुंडे मतिर्भिन्ना अर्थात संसार में हर व्यक्ति, हर व्यक्ति के चिन्तन से सहमत नहीं हो सकता। जितने मनुष्य हैं उतने प्रकार के चिंतन हैं। सब अलग–अलग चिंतन करते हैं। सबका अलग–अलग विचार हो सकता है, सबमें मतभेद हो सकता है किन्तु मनोभेद नहीं होना चाहिए। प्रजातंत्र की यही विशेषता है कि यहां मतभेद होता है मनोभेद नहीं। अपने–अपने विचारों को व्यक्त करने में सभी स्वतंत्र हैं। जितने भी राजनीतिक दल हैं सबका चिंतन अलग–अलग है। जनता भी अपनी इच्छानुसार राजनीतिक दलों से सम्बन्धित रहती है। विचारों की स्वतंत्रता से प्रजातंत्र सबल होता है। मनोभेद सबको अलग–अलग कर सकता है। मनोभेद नकारात्मक होता है।

प्रदूषण मानव जीवन के लिए बहुत घातक है। यह प्रदूषण चाहे प्राकृतिक हो या मानवीय। प्राकृतिक प्रदूषण के अंतर्गत पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश के प्रदूषण से उत्पन्न प्राकृतिक तत्व है और मानवीय प्रदूषण के अंतर्गत मुख्य है– मानव का विचार। प्रदूषण सबसे पहले मानव के मन में उत्पन्न होता है। बाद में वह भौतिक रूप धारण करता है। मन का प्रदूषण इतना विकृत है कि वह मानव को मानसिक रूप से परेशान कर देता है और मानव मानसिक रूप से अस्वस्थ हो जाता है। जब मानव मानसिक रूप से अस्वस्थ हो जाात है तो उसके विचार नकारात्मक हो जाते है और वह गलत और सही में अंतर नहीं कर पाता। उसके द्वारा किये गये कार्य मानसिक प्रदूषण की श्रेणी में आते है। जो व्यक्ति अपने प्रति जागरूक होता है, स्वयं का निरीक्षण करता है, अपने भावों को समझता है, वह उसमें परिवर्तन करने में भी सक्षम हो जाता है। स्वयं के प्रति जागरूकता, भावात्मक परिष्कार भावात्मक विकास एवं भावात्मक संतुलन का आधारभूत सूत्र है।

जीवन एक संघर्ष है। किसी भी लक्ष्य की प्राप्ति या इच्छाओं की आपूर्ति में अनेक बाधाएं आती है। जीवन में उतार–चढ़ाव भी आते रहते हैं। उस समय हमारे भीतर कितनी समता रही पाती है? कितना संतुलन रह पाता है? यही वह परीक्षा की घड़ी भी होती है। इससे ही हमारे सुदृढ चरित्र का पता लगता है जो व्यक्ति प्रतिकूल परिस्थितियों का वस्तुपरक सकारात्मक दृष्टिकोण से सतत जागरूक रहकर मूल्यांकन करता है वह जीवन में आने वाली चुनौतियों को सहज रूप से स्वीकार कर उससे निपटने में सक्षम हो जाता हैं सत्संग, एकान्तवास, ध्यान, कायोत्सर्ग आदि इसमें बहुत सहायक सिद्ध होते है। इनसे व्यक्ति दुश्चिन्ता, अवसाद अथवा निराशा से उबर जाता है। जब कोई व्यक्ति बूरा काम करता है तो उसकी चेतना उसे रोकने की कोशिश करती है किन्तु वह उसे देखा–अनदेखा कर देता है। यह माना जाता है कि हर व्यक्ति एक निश्चित उद्देश्य को लेकर इस पृथ्वी पर जन्म लेता है। वह अपने इस उद्देश्य का ज्ञान स्वयं के निरन्तर सम्पर्क एवं अन्दर से आने वाली स्वतः स्फूर्त प्रेरणाओं को सुन कर ही कर सकता है।

भीतर से आने वाली प्रेरणाएं किसी भी बड़ी उपलब्धि का सबसे बड़ा आधार होती है। प्रत्येक बड़ी उपलब्धि के लिए स्पष्ट लक्ष्य एवं निरन्तर आशावादी दृष्टि की आवश्यकता होती है। वह व्यक्ति को अन्तःप्रेरणा से उपलब्ध होती रहती है। यह जीवन में सफलता के लिए अत्यन्त आवश्यक है। कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जिन्हें तुरन्त सहायता मिल जाती है क्योंकि ऐसे लोग सम्पर्क करने व सम्बन्धों को बनाये रखने में निपुण होते हैं। फिर उनकी बौद्धिक क्षमता कितनी भी क्यों न हो।

भावात्मक रूप से विकसित व्यक्ति की एक अलग ही पहचान होती है। संवेग एक जटिल भावात्मक प्रक्रिया है। भाव संवेग की ही पूर्व अवस्था होती है। भावों में उफान के पश्चात् संवेग की अवस्था आती है। संवेग बाह्य परिस्थिति या अन्तः मनस्थिति के प्रति तीव्र प्रतिक्रियाएं है। इसके कारण व्यक्ति में बाह्य एवं आंतरिक दोनों प्रकार के परिवर्तन होते हैं। यह कहा जाता है कि क्रोध हमारी इच्छाओं में रूकावट के कारण होने वाली प्रतिक्रिया है। भय हमारी परिणामों के प्रति आशंकाओं की प्रतिक्रिया है। सहानुभूति एवं प्रेम के अभाव की प्रतिक्रिया दुःख है। खुशी, आनन्द, प्रसन्नता सब सकारात्मक प्रतिक्रियाएं हैं। संवेगों की तीव्र प्रतिक्रियाओं के कारण व्यक्ति के भाव जगत् में असंतुलन पैदा हो जाता है।

व्यक्ति अपनी संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं की अभिव्यक्ति या प्रबन्धन अनेक रूपों में कर अपने आपको शान्त, हल्का व तनावमुक्त करने का प्रयास करता है। क्रोध, मान, माया व लोभ इन चारों को आध्यात्मिक या आन्तरिक दोष कहा गया है। ये चारों ही भावात्मक रुग्णता के मूल कारण भी है। भौतिकतावादी जीवनशैली और विलासमय जीवन पद्धति से भावात्मक अस्थिरता और मनोविकारों की निरन्तर वृद्धि हो रही है। तनाव, चिन्ता, भय, अवसाद, निराशा, कुण्ठा, मिर्गी, आक्रामकता, क्रूरता, ईर्ष्या आदि समस्याएं बेतहाशा बढ़ रही है। इससे समाज भी रुग्ण हो रहा है। समाज में भी हिंसा, आतंक, अपराध, बलात्कार, चोरी, भ्रष्टाचार आदि बढ़ रहे है। वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्री सभी इन समस्याओं से चिन्तित हैं। इनसे निपटने के लिए नित्य नये प्रयोग हो रहे हैं। विश्वयुद्ध की विभीषिका वैचारिक प्रदूषण से ही तैयार होती है।